Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

'संस्कार' उपन्यास: परंपरा, धर्म और मानव चेतना का द्वंद्व

मनोज कुमार मेहेर*

*अध्यापक (हिंदी) डालमिआ महाविद्यालय, राजगांगपुर (ओडिशा) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध-सार यू. आर. अनंतमूर्ति के प्रसिद्ध उपन्यास संस्कार में चित्रित परंपरा, धर्म और मानव चेतना के द्वंद्व के विश्लेषण पर केंद्रित है। यह उपन्यास भारतीय ब्राह्मण समाज की रूढ़ धार्मिक संरचना, नैतिक पाखंड तथा व्यक्ति के आंतरिक संघर्ष को अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत करता है।

कथा नारणप्पा की मृत्यु से आरंभ होकर पूरे समाज को आत्ममंथन की स्थिति में ला खड़ा करती है। नारणप्पा परंपरागत मूल्यों का विरोधी है, जबकि प्राणेशाचार्य शास्त्रनिष्ठ जीवन का प्रतिनिधि। इन दोनों के माध्यम से लेखक यह स्पष्ट करते हैं कि धर्म जब मानवीय संवेदना से कट जाता है, तब वह केवल कर्मकांड बनकर रह जाता है। प्राणेशाचार्य का मानसिक द्वंद्व इस सत्य को उद्घाटित करता है कि कठोर धार्मिक अनुशासन मनुष्य को भीतर से रिक्त कर सकता है।

उपन्यास में ब्राह्मण समाज की दोहरी नैतिकता, स्त्री की उपेक्षित स्थिति तथा सामाजिक भय का यथार्थ चित्रण मिलता है। चंद्रि का नारणप्पा का दाह-संस्कार करना इस बात का प्रतीक है कि सच्ची मानवता जाति और धर्म की सीमाओं से परे होती है। लेखक 'संस्कार' शब्द को नया अर्थ देते हुए यह प्रतिपादित करते हैं कि वास्तविक संस्कार कर्मकांड नहीं, बल्कि करुणा, विवेक, आत्मचिंतन और नैतिक साहस में निहित हैं।

अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि संस्कार परंपरा और आधुनिक चेतना के टकराव को उजागर करते हुए व्यक्ति को आत्मबोध की ओर ले जाता है। यह उपन्यास पाठक को अंधी धार्मिक मान्यताओं पर प्रश्न उठाने और मानवता को सर्वोच्च मूल्य मानने की प्रेरणा देता है। इस प्रकार संस्कार केवल साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का सशक्त दस्तावेज है, जो आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक है।

शब्द कुंजी – परंपरा बनाम आधुनिकता, धर्म और मानव चेतना, ब्राह्मण समाज, आत्मसंघर्ष, नारी स्थिति, सामाजिक पाखंड, नैतिक मूल्य।

प्रस्तावना – भारतीय साहित्य में कुछ कृतियाँ ऐसी होती हैं जो केवल कथा नहीं रचतीं, बल्कि समाज की जड़ परंपराओं पर सीधा प्रहार करती हैं। 'संस्कार' इसी श्रेणी की रचना है। यह उपन्यास परंपरा और आधुनिक चेतना के बीच चल रहे गहरे द्वंद्व को अत्यंत सूक्ष्मता और साहस के साथ प्रस्तुत करता है। अनंतमूर्ति ने ब्राह्मण समाज की आंतरिक संरचना को केंद्र में रखकर यह दिखाया है कि जब धर्म कर्मकांड बन जाता है और परंपरा विवेकहीन हो जाती है, तब मनुष्य की स्वतंत्रता, करुणा और नैतिक विकास बाधित होने लगते हैं। 'संस्कार' का केंद्रीय प्रश्न यही है कि क्या संस्कार केवल शास्त्रीय नियमों का पालन है, या उसमें मानवीय संवेदना, आत्मचिंतन और नैतिक साहस भी शामिल होना चाहिए।

उपन्यास की पृष्ठभूमि एक पारंपरिक ब्राह्मण बस्ती है, जहाँ जीवन का प्रत्येक निर्णय शास्त्रों और सामाजिक मान्यताओं से नियंत्रित होता है। कथा की शुरुआत नारणप्पा की मृत्यु से होती हैकृएक ऐसे ब्राह्मण की मृत्यु से जिसने जीवनभर धार्मिक नियमों का उल्लंघन किया, मद्यपान किया, निम्न जाति की स्त्री चंद्रि के साथ रहा और कर्मकांडों में विश्वास नहीं किया। उसकी मृत्यु के बाद पूरा समाज असमंजस में पड़ जाता है कि क्या उसका अंतिम संस्कार ब्राह्मण रीति से किया जाए। यही प्रश्न उपन्यास का केंद्रीय संघर्ष बन जाता है। एक मृत शरीर समाज की सामूहिक नैतिकता की परीक्षा लेता है और यह उजागर करता है कि धर्म यहाँ करुणा का नहीं, बल्कि भय और प्रतिष्ठा का उपकरण बन चुका है।

नारणप्पा केवल एक पात्र नहीं, बल्कि रूढ़ व्यवस्था के विरुद्ध खड़ा हुआ प्रतीक है। यद्यपि वह कथा के आरंभ में ही मर जाता है, पर उसकी उपस्थिति पूरे उपन्यास में व्याप्त रहती है। उसका जीवन समाज की दोहरी नैतिकता को बेनकाब करता है जिसे 'पापी' कहा जाता है, वही अपने आचरण में कहीं अधिक ईमानदार प्रतीत होता है। नारणप्पा यह स्थापित करता है कि केवल जन्म से ब्राह्मण होना पर्याप्त नहींय मनुष्य की नैतिकता उसके कर्म और दृष्टिकोण से तय होती है। उसकी मृत्यु के बाद भी उसके विचार समाज को भीतर से झकझोरते रहते हैं, मानो लेखक यह संकेत दे रहे हों कि विचारों की मृत्यु नहीं होती।

इस सामाजिक उथल-पुथल के बीच प्राणेशाचार्य उपन्यास का सबसे जटिल और महत्वपूर्ण चरित्र बनकर उभरता है। वह शास्त्रों का ज्ञाता है, कठोर अनुशासन में जीवन बिताता है और पूरे समाज में आदर का पात्र है। सब उसकी ओर देखते हैं कि वही निर्णय देगा, पर नारणप्पा की मृत्यु उसे गहरे मानसिक द्वंद्व में डाल देती है। एक ओर शास्त्र उसे बताते हैं कि नारणप्पा पापी है, दूसरी ओर उसका अंत:करण यह स्वीकार नहीं कर पाता कि मृत्यु के बाद भी मनुष्यों में भेद किया जाए। वर्षों की तपस्या और संयम के बावजूद वह पहली बार अपने भीतर इच्छाओं और भावनाओं को उभरते हुए महसूस करता है। यह अनुभव उसे भीतर से तोड़ देता है। उसका तथाकथित 'पतन'

वास्तव में आत्मबोध की ओर बढ़ता हुआ कदम बन जाता है, जहाँ वह यह समझने लगता है कि कठोर धार्मिक अनुशासन मनुष्य को पूर्ण नहीं बना सकता, जब तक उसमें मानवीय करुणा और आत्मचिंतन न हो।

उपन्यास में ब्राह्मण समाज का यथार्थ चित्रण अत्यंत तीखा है। बाहर से यह समाज शुद्धता और नैतिकता की बातें करता है, किंतु भीतर भय, स्वार्थ और अवसरवाद से भरा हुआ है। नारणप्पा के संस्कार को लेकर उनकी चिंता मृत व्यक्ति की आत्मा के लिए नहीं, बल्कि अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए है। धर्म यहाँ सामाजिक नियंत्रण का साधन बन जाता है। अनंतमूर्ति यह स्पष्ट करते हैं कि जब धर्म सत्ता और भय से जुड़ जाता है, तब वह मानवता से कट जाता है। यही पाखंड उपन्यास की सबसे बड़ी आलोचना है।

इसी पाखंडी व्यवस्था के बीच चंद्रि मानवीय संवेदना की सशक्त प्रतीक बनकर उभरती है। समाज जिसे 'अपवित्र' मानता है, वही चंद्रि नारणप्पा का दाह-संस्कार कर देती है। यह दृश्य उपन्यास का सबसे प्रभावशाली क्षण है। यहाँ लेखक यह स्पष्ट कर देते हैं कि सच्ची मानवता जाति और धर्म की सीमाओं से परे होती है। चंद्रि का यह कर्म बताता है कि नैतिकता केवल ग्रंथों में नहीं, बल्कि मनुष्य के हृदय में निवास करती है। इस एक कार्य से वह पूरे तथाकथित 'पवित्र' समाज से अधिक ऊँची नैतिक स्थिति में आ खड़ी होती है।

स्त्री पात्रों की स्थिति भी उपन्यास में अत्यंत मार्मिक ढंग से उभरती है। वे पुरुष-प्रधान व्यवस्था की शिकार हैं और उनके पास निर्णय की स्वतंत्रता नहीं है। चंद्रि सामाजिक तिरस्कार सहती है, फिर भी वही सबसे मानवीय कार्य करती है। अन्य स्त्रियाँ परंपरा के बोझ तले दबकर जीती हैं। अनंतमूर्ति यह दिखाते हैं कि पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को सहनशीलता की मूर्ति बना दिया जाता है और उसकी पीड़ा को धर्म के नाम पर अनदेखा कर दिया जाता है।

'संस्कार' का सबसे महत्तवपूर्ण पक्ष यह है कि वह 'संस्कार' शब्द को नया अर्थ देता है। लेखक के अनुसार सच्चे संस्कार कर्मकांड नहीं, बल्कि करुणा, विवेक, आत्मचिंतन और नैतिक साहस में निहित होते हैं। यदि धर्म इन मूल्यों से कट जाए, तो वह केवल रूढ़ अनुष्ठानों का ढांचा बनकर रह जाता है। इस दृष्टि से 'संस्कार' केवल धार्मिक आलोचना नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना का प्रयास भी है।

दार्शनिक स्तर पर उपन्यास में अस्तित्ववादी चिंतन की झलक मिलती है। व्यक्ति को अपने चुनावों की जिम्मेदारी स्वयं उठानी पड़ती है। प्राणेशाचार्य का संघर्ष यही दर्शाता है कि अंतत: मनुष्य को अपने अंत:करण की आवाज सुननी होती हैय समाज या शास्त्र उसे पूर्ण समाधान नहीं दे सकते। यह आत्मसंघर्ष आधुनिक मनुष्य की उस स्थिति से मेल खाता है, जहाँ वह परंपरा और आधुनिकता के बीच रास्ता खोज रहा है।

समकालीन संदर्भों में 'संस्कार' की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। आज भी हम अनेक सामाजिक प्रश्नों पर परंपरा और विवेक के बीच झूलते हैं। यह उपन्यास हमें सिखाता है कि अंधी परंपरा समाज को जड़ बना देती है और जब तक व्यक्ति प्रश्न करना नहीं सीखता, तब तक वास्तविक प्रगति संभव नहीं। अनंतमूर्ति का संदेश स्पष्ट है धर्म से पहले मानवता आवश्यक है। यदि समाज करुणा और विवेक को अपना ले, तो अनेक सामाजिक विडंबनाएँ स्वत: समाप्त हो सकती हैं।

अंतत: 'संस्कार' केवल एक कथा नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का दस्तावेज है। यह पाठक को आत्ममंथन के लिए विवश करता है और यह प्रश्न छोड़ जाता है कि क्या हम परंपरा के नाम पर मानवता का बलिदान दे रहे हैं। अनंतमूर्ति ने अत्यंत साहस के साथ यह दिखाया है कि सच्चा धर्म वही है जो मनुष्य को मनुष्य बनाए। इस प्रकार 'संस्कार' परंपरा, धर्म और मानव चेतना के संघर्ष का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है और पाठक को निष्क्रिय दर्शक बनने के बजाय विवेकपूर्ण निर्णय लेने की प्रेरणा देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. अनंतमूर्ति, यू.आर., 'संस्कार' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. शर्मा, रामविलास, 'आधुनिक भारतीय उपन्यास' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. सिन्हा, पुष्पा. यू. आर. अनंतमूर्ति :'व्यक्तित्व और कृतित्व' लोकभारती प्रकाशन,प्रयागराज।

****